AIDWA

सितंबर न्यूज लेटर

अनुक्रमणिका

- संपादकीय
- 27 सितंबर भारत बंद को एडवा का समर्थन – मरियम ढवले
- हरियाणा में पटौदी में जन सम्मेलन – सविता
- धारा 370 के खात्मे के बाद कश्मीर के दो साल – रज़ा मुज़फ्फर भट
- उत्तर प्रदेश की जनसंख्या नीति – सुभाषिणी अली
- हाल के न्यायालयों के फैसले और एडवा की प्रतिक्रिया – सुनीता पांडे

सम्पादकीय

इस अंक की सम्पादकीय में बहुत कुछ लिखा जा सकता था। लेकिन। मुझे लगा कि तमाम आशाजनक और निराशाजनक बातो का बखान न करके हम 5 अगस्त के मुजफ्फरनगर की महान, विराट किसान महा पंचायत की तस्वीरों को ही आपके सामने रखने का काम करें। यह तस्वीरे उस आंदोलन की झलकिया दिखाती हैं। यह आंदोलन उन तीन काले कानूनों के विरुद्ध हैं जो उदारवादी नीतियों का परिणाम हैं। यह आंदोलन मजदूरों की मांगो को उठा रहा है। यह आंदोलन महिला किसानों को सार्वजनिक क्षेत्र में जगह देकर उनकी मांगों का समर्थन करता है। यह आंदोलन साम्प्रदायिकता के खिलाफ डटकर खड़ा है। और इस आंदोलन ने स्पष्ट शब्दों में समस्त जनता के सबसे बड़े दुश्मन, संघ परिवार, का विरोध करने का फैसला लिया है। अगले साल उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड से भाजपा की सरकारों को उखाड़ फ्रंकने का फैसला भी इसी किसान आंदोलन ने लिया है।

तो आइए बहनो, हम सब मिलकर इस महान किसान आंदोलन की जय जयकार करें, उसके सन्देश और उसकी ताकत का हैम प्रचार प्रसार करें और उसे जीत की ओर ले जाने में हम भी अपनी पूरी ताकत लगाएं। उनकी जीत हमारी जीत है!

सुभाषिनी अली

एडवा का 27 सितंबर के भारत बंद को समर्थन करने का आह्वान

एकजुट होकर भारत को मोदी–शाह–अंबानी–अडानी के अपवित्र गठजोड़ के चंगुल से निकालो!

–मरियम धवले

ऐतिहासिक किसानों के संघर्ष ने महीनों पूरे कर लिए हैं और यह अभी भी मजबूत होता जा रहा है। करीब 600 किसानों की जान जा चुकी है। दिल्ली की सीमाओं पर चल रही अनिश्चितकालीन नाकेबंदी में बड़ी संख्या में महिलाओं सहित लाखों की संख्या में महिलाएं बैठी हुयी हैं। देश की जनता धीरे–धीरे सही लेकिन निश्चित रूप से उस भारी खतरे को पहचान रही है जो भाजपा–आरएसएस ने लाखों भारतीयों की जिंदगी में पेश किया है । हमारे धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक राष्ट्र और भारतीय संविधान को बचाने के लिए इस कारपोरेट समर्थक, सांप्रदायिक और फासीवादी ताकत को पराजित किया ही जाना चाहिए। इस राष्ट्र विरोधी, मनुवादी मंडली को हमारीं राष्ट्रीय परिसंपत्तियों और हमारे पूरे देश को कौडी के मोल बेच देने से रोकना होगा।

एक स्वतंत्र देश के रूप में अपने अस्तित्व के 74 वर्षों में, भारत में अब तक भाजपा–आरएसएस सरकार जैसी गैर जिम्मेदार, बेपरवाह और अभिमानी सरकार कभी नहीं रही है। मजदूरों और किसानों की जिंदगियों को बर्बाद कर देने वाले तीन कृषि कानूनों और चार श्रम कानूनों को वापस लेने से यह सरकार ठोक कर

इनकार कर देती है। यह कोविड महामारी की वजह से जनता की भयानक तबाही कों लेकर बेहद निर्मम है। बढ़ती कीमतें, भूख में भारी वृद्धि, अभूतपूर्व बेरोजगारी, चरमराती स्वास्थ्य और शिक्षा प्रणालियां, बढ़ती ऋणग्रस्तता, महामारी के दौरान हुये अनाथ बच्चों की समस्याएं, महिलाओं पर बढ़ती हिंसा – यह सब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को नहीं दिखता है ।

घर में चूल्हा चौंका चलता रहे इसलिये महिलायें अथक दौड धूप में लगी हुयी हैं। एक शोषक और पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था में महिलाएं सबसे अधिक त्रस्त होती है। वे घर में सबसे आखिर में खातीं हैं और इसीलिये न्यूनतम खा पाती हैं वह भी यदि बचा हुआ हो तभी। आजीविका के नुकसान ने करोड़ों गरीबों को कर्ज के गहरे कूयें में धकेल दिया है। सरकार की ओर से कोई मदद नहीं मिलने से महिलाएं निराशा में हैं क्योंकि उन्हें पता है कि उनके लिए यह कर्ज चुकाना नामुमकिन होगा। इस परिस्थिति में निश्चित रूप से आत्महत्याओं में तेजी आएगी। लाखों बच्चोंको शिक्षा व्यवस्था से बाहर कर दिया गया है। मोदी सरकार बच्चों के हाथों से कलम और पेंसिल ठीक उसी तरह से छीन रही है, जैसे एकलव्य हाथ के अगूठे को काट लिया गया था। यह आरएसएस की मनुवादी विचारधारा के अनुरूप ही है। बाल श्रम, मानव तस्करी, बाल विवाह सभी की संख्या तेजी के साथ बढ़ रही है। बच्चों से उनका बचपन छीना जा रहा है। इन समस्याओं को कैसे दूर किया जाए और कैसे इस देश के बच्चों को बचाया जाए, इस संबंध में इस बेरहम सरकार के पास कोई योजना नहीं है ।

इन सभी मुद्दों पर सिंघू सीमा पर 26–27 अगस्त को संयुक्त किसान मोर्चा द्वारा आयोजित राष्ट्रीय अधिवेशन में चर्चा की गई । इस अधिवेशन में जो उत्साह और एकता दिखी वह बहुत प्रेरणादायक थी। इस अधिवेशन में 22 राज्यों के किसानों, मजदूरों, खेतिहर मजदूरों, महिलाओं, छात्र, युवाओं, दलितों, आदिवासियों के सैकंडों संगठनो के 2000 से अधिक प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया।

संयुक्त किसान मोर्चा ने 27 सितंबर को भारत बंद और पांच सितंबर को मुजफ्फरनगर में एक विशाल रैली के द्वारा अपने ''मिशन उत्तर प्रदेश–उत्तराखंड'' का उद्घाटन करने का आह्वान किया है। अखिल भारतीय जनवादी महिला समिति (एडवा) उपरोक्त सभी मुद्दों पर संघर्ष कर रही है और हजारों महिलाओं को सड़कों पर ला रही है । एडवा भारत बंद के लिये पूरे जोर शोर से अभियान चलायेगी। इसकी सभी इकाइयां पूरे देश में हजारों महिलाओं को सक्रिय रूप से लामबंद करेंगी। भारत को मोदी–शाह–अंबानी–अडानी के अपवित्र गठजोड़ के चंगुल से छुड़ाने के लिये सभी भारतीयों का एकजुटता से किया जा रहा यह संघर्ष है। ! हम लड़ेंगे! हम जीतेंगे!

'सांप्रदायिक हिंसा व नफरत फैलाने वालों के मंसूबे नाकामयाब करो और आपसी भाईचारे को मजबूत करो'

—सविता
राज्य महासचिव, जनवादी महिला समिति, हरियाणा

हरियाणा के गुरुग्राम जिला का पटौदी कस्बा मशहूर क्रिकेटर नवाब मंसूर अली खान पटौदी और उनके बेटे अदाकार सैफ अली खान के नाम से दुनिया में जाना जाता है। परन्तु पिछले दिनों यह इलाका एक और वजह से चर्चा में आया जब 4 जुलाई को हिंदूत्ववादी ताकतों द्वारा लव जिहाद, धर्मांतरण, जनसंख्या नियंत्रण आदि मुद्दों पर चर्चा के बहाने यहां एक महापंचायत का आयोजन किया। इस महापंचायत में वक्ताओं ने सरेआम कानून और समाज की रिवायतों की धज्जियां उड़ाते हुएअल्पसंख्यकों के खिलाफ जमकर नारेबाजी की, भड़काऊ और जहरीले भाषण दिए और प्रशासन खामोश तमाशा देखता रहा। आयोजकों व वक्ताओं पर कोई कानूनी कार्रवाई की। कई दिनों बाद भडकाऊ भाषण देने वालों में से एक रामभक्त गोपाल पर एफआईआर दर्ज की गई, अन्य किसी पर आज तक भी कानूनी कार्रवाई नहीं की गई।

दरअसल पिछले कुछ समय से भाजपा और आरएसएस के नेताओं की सरपरस्ती में दक्षिणी हरियाणा विशेषकर मेवात में हिंदू महापंचायतों का दौर चल रहा है। 30 मई को नूंह जिला के इंडरी में आसिफ हत्याकांड के आरोपियों को बचाने के बहाने मजहब के नाम पर महापंचायत की गई। इससे पहले इस पूरे इलाके में कई छोटी—छोटी पंचायतें की गई। फिर 4 जुलाई को पटौदी में पंचायत की गई। ये पंचायतें ऐसे समय में की जा रही हैं, जब हरियाणा भर में कृषि विरोधी काले कानूनों के खिलाफ लोग एकजुट होकर संघर्ष कर रहे हैं और भाजपा आरएसएस की आंदोलन में फुट डालने की साजिशों को नाकाम कर रहे हैं। ऐसे में जहां—2 आंदोलन कमजोर है वहां भाजपा और आरएसएस के संगठन लगातार योजनाबद्ध ढंग से सांझी संस्कृति, सांझी विरासत और साम्प्रदायिक सद्भाव पर हमले कर रहे हैं।

इन पंचायतों में बहू बेटियों की इज्जत बचाने के नाम पर अल्पसंख्यकों के खिलाफ जहरीला वातावरण तैयार करने, युवा लड़कियों व महिलाओं पर शिंकजा कसने और हिंसक व बलात्कारी मानसिकता के पुरुषों की फौज तैयार करने का काम साथ—साथ किया जा रहा है। इस जहरीले अभियान के परिणाम बहुत भंयकर हो सकते हैं।

परन्तु राज्य की भाजपा सरकार जिस पर अमन चौन कायम रखने, अल्पसंख्यकों के हितों को सुरक्षित रखने और सांप्रदायिक दंगे ना होने देने का संवैधानिक दायित्व है वह ऐसे जहरीले अभियान को रोकने की बजाय उसे चलाने वालों को ईनाम बांट रही है। भाजपा ने इंडरी और पटौदी की महापंचायतों की सरपरस्ती करने वाले नेता सुरजपाल अम्मु को इनामस्वरूप अपना मीडिया प्रवक्ता बना दिया। सीपीआईएम और जनसंगठनों ने इसके विरोध में गुरुग्राम पुलिस कमिश्नर, उपायुक्त, एसीपी पटौदी और पटौदी थाना इंचार्ज को ज्ञापन दिए। भड़काऊ भाषण देने वाले सूरजपाल अम्मू, राम भक्त गोपाल और अन्य वक्ताओं के खिलाफ एफ आई आर दर्ज करने की मांग की। परन्तु प्रशासन द्वारा एफ आई आर दर्ज नहीं की गई।
इसी कड़ी में 25 अगस्त को पटौदी में नागरिक सम्मेलन का आयोजन किया गया। नागरिक सम्मेलन नागरिक मंच गुरूग्राम, जनवादी महिला समिति, सीटू व अन्य सामाजिक संगठनों द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित किया गया। कानपुर से पूर्व सांसद तथा सीपीआईएम पोलिट ब्यूरो सदस्य सुभाषिनी अली सहगल नागरिक सम्मेलन में मुख्य वक्ता के तौर पर शामिल हुईं। सम्मेलन की अध्यक्षता सीटू के जिला अध्यक्ष कंवर लाल यादव, जनवादी महिला समिति की जिला अध्यक्ष भारती, किसान सभा के नेता अख्तर हुसैन, काले खान, रामनिवास ठाकरान, धर्मवीर, छाजूराम और पार्षद कैलाश ने संयुक्त रूप से की। संचालन नागरिक मंच के संयोजक एस एल प्रजापति और जनवादी महिला समिति की राज्य अध्यक्ष उषा सरोहा ने किया। सम्मेलन में मांग उठाई गई कि मेवात के इंडरी और पटौदी में हुई तथाकथित हिंदू महापंचायत के आयोजकों और भड़काऊ भाषण देने वालों के खिलाफ कानूनी कार्रवाई की जाए। किसी भी तरह की सांप्रदायिक और जाति आधारित लामबंदी पर रोक लगाई। पटौदी के अमन चौन और सांप्रदायिक सद्भाव को किसी भी सूरत में बिगड़ने ना दिया जाए। इन मांगों बारे एसडीएम पटौदी को ज्ञापन भी दिया गया।

सम्मेलन में बोलते हुए सुभाषिनी अली सहगल ने कहा कि पूरा देश भाजपा सरकार की जनविरोधी नीतियों और कोरोना महामारी की वजह से पैदा हुए भंयकर संकट से जूझ रहा है। बढ़ती मंहगाई, बेरोजगारी, गरीबी, संवैधानिक व जनतांत्रिक अधिकारों हमलों ने स्थिति को बेहद भयावह बना दिया है। आज जरूरत तो यह है कि केंद्र और राज्य सरकारें लोगों को राहत देने वाले कदम उठाएं परन्तु सत्ता में बैठी ताकतें ना सिर्फ बड़े–बड़े पूंजीपतियों के हित में काम कर रही हैं बल्कि असली मुद्दों से जनता का ध्यान भटकाने और अपनी विफलताओं को छुपाने के लिए फूट डालो और राज करो की नीति अपना रही हैं।

उन्होंने कहा कि महिलाओं व दलितों पर लगातार अपराध बढ़ रहे हैं। समाज के विभिन्न तबके अपनी इस दुर्दशा के खिलाफ संघर्ष कर रहे हैं। परन्तु सत्तासीन भाजपा और आरएसएस इन असली मुद्दों पर काम करने की बजाय जात, धर्म, क्षेत्र के नाम पर लव जिहाद, धर्मांतरण, जनसंख्या नियंत्रण आदि हव्वे खड़े कर रही है। हमें एकजुट होकर शांतिपूर्वक ढंग से साम्प्रदायिक ताकतों के मंसूबों को नाकामयाब करना होगा।

सीपीआईएम राज्य सचिव सुरेंद्र सिंह, जनवादी महिला समिति की राज्य महासचिव सविता, सामाजिक कार्यकर्ता बलबीर मलिक, सीटू के राज्य उपाध्यक्ष सतवीर सिंह, सर्व कर्मचारी संघ के राज्य उपाध्यक्ष सुरेश नौहरा, ग्रामीण सफाई कर्मचारियों के राज्य अध्यक्ष देवी राम, एसएफआई के नेता चेतन सरोहा, स्वराज इंडिया के हरि सिंह चौहान, हरिश, आशा वर्कर्स यूनियन के नेता मीरा, मिड डे मील वर्कर्स यूनियन के नेता बबीता, आंगनवाड़ी वर्कर्स यूनियन की नेता कमलेश, सुमन आदि ने सम्मेलन को संबोधित किया।

धारा 370 के बिना दो सालों ने जम्मू–कश्मीर के लोगों को लाभ पहुंचाने के लिए कुछ नहीं किया

–रज़ा मुज़फ्फर भट

2019 में केंद्र सरकार ने जम्मू–कश्मीर को वे अधिकार देने का वादा किया था जिनसे पूर्ववर्ती राज्य पहले इससे वंचित रह गया था। लेकिन लोकतांत्रिक तरीके से चुनी हुई स्थानीय सरकार के बिना लोग अधिकार रहित महसूस करते हैं । दो साल पहले 5 अगस्त, 2019 को केंद्र सरकार ने भारत के संविधान की धारा 370 को निरस्त करने के लिए संसद में एक प्रस्ताव पेश किया, जिसने जम्मू–कश्मीर राज्य को विशेष दर्जा दिया था। सरकार ने एक विधेयक भी पेश किया जिसने राज्य को दो केंद्र शासित प्रदेशों (केंद्र शासित प्रदेशों) में विभाजित किया, एक का नाम जम्मू–कश्मीर और दूसरा लद्दाख है ।

संसद से प्रस्ताव को मंजूरी मिलने और विधेयक पारित होने के दो दिन बाद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 8 अगस्त, 2019 को एक टेलीविजन प्रसारण में राष्ट्र को संबोधित करते हुए कहा था कि केंद्र सरकार ने जम्मू–कश्मीर के विशेष दर्जे को हटाने के लिए क्यों चुना था।

मोदी ने अपने संबोधन में कहा, ''हमने धारा 370 में उन प्रावधानों को हटा दिया है जो जम्मू–कश्मीर और लद्दाख के विकास में बाधक के रूप में काम करते हैं। जम्मू–कश्मीर और लद्दाख के लोग अपने अधिकारों से वंचित थे । धारा 370 के निरस्त होने के साथ ही सरदार वल्लभ भाई पटेल, बी आर अंबेडकर और श्यामा

प्रसाद मुखर्जी के सपने पूरे हो गए हैं। जम्मू–कश्मीर में अब एक नया युग शुरू हो गया है।''

उस भाषण के बाद से दो वर्षों में, केंद्र शासित प्रदेश जम्मू–कश्मीर में केवल एक चीज बदल गई है और वह है लोगों की शिकायतें, विशेष रूप से समाज के आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लोगों की शिकायतें बढ़ गयीं हैं । इसका कारण यह है कि 5 अगस्त, 2019 को एक विरोधाभास अस्तित्व में आया। चूंकि केंद्र शासित प्रदेश में एक निर्वाचित राज्य सरकार के बजाय केंद्र सरकार का सीधा शासन है, इसलिए जो लोग अपनी शिकायतों को प्रधानमंत्री कार्यालय (पीएमओ), केंद्रीय मंत्रालयों या यहां तक कि जम्मू काश्मीर के उपराज्यपाल (एलजी) के कार्यालय में ले जाने में सक्षम हैं, उन्हें त्वरित प्रतिक्रियाएं मिलती हैं । लेकिन जिन्हें स्थानीय नौकरशाहों और पुलिस अधिकारियों की मदद की जरूरत होती है, उन्हें चुप्पी और भ्रष्टाचार के सिवा कुछ नहीं मिलता। जमीनी स्तर पर लोगों के अनुसार उन्हें तहसील, ब्लॉक और जिला कार्यालयों से न्याय नहीं मिलता, थानों, तहसीलदार कार्यालयों और नगर पालिकाओं में भ्रष्टाचार कम नहीं हुआ है और केंद्र सरकार द्वारा लागू की जा रही योजनाओं खासकर राष्ट्रीय फ्लैगशिप योजनाओं को पारदर्शी तरीके से लागू नहीं किया जाता है।

जम्मू काश्मीर मॉडल?

2019 के लोक सभा चुनावों के दौरान अजीम प्रेमजी विश्वविद्यालय और लोकनीति प्रोग्राम फार कंपरेटिव डेमोक्रेसी द्वारा कराए गए ''चुनावों के बीच राजनीति और समाज'' नामक सर्वेक्षण से पता चला है कि नागरिक अपनी समस्याओं के हल के लिये अपने स्थानीय सरपंच (पंचायत प्रमुख) या पार्षद से संपर्क करेंगे ताकि उनकी शिकायतों का समाधान उनके स्थानीय विधायक या सांसद से किया जा सके ।

साथ ही, भले ही राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में पीएमओ, केंद्रीय मंत्रालयों और नागरिक सचिवालय कार्यालय नागरिकों के प्रति उत्तरदायी हों, जब तक स्थानीय जिला या ब्लॉक अधिकारी समान रूप से उत्तरदायी न हों, तब तक यह नहीं कहा जा सकता कि व्यवहार में शासन की व्यवस्था प्रभावी है। लेकिन दुर्भाग्यवश, चूंकि अनुच्छेद 370 को निरस्त कर दिया गया, इसलिए जम्मू–कश्मीर के जिला, तहसील और ब्लॉक स्तर के अधिकारियों और इस केंद शासित प्रदेश के लोगों के बीच संपर्क कम ही रहा है।

उदाहरण के लिए, जिलाधिकारियों से अपेक्षा की जाती है कि वे उस जनता के साथ तालमेल बनाएं जिनके लिये वे काम करते हैं । लेकिन 2019 के बाद से वे अपने कार्यालय की कुर्सियों से इतने कसकर चिपके हुए हैं कि एलजी मनोज सिन्हा को कुछ दिन पहले एक सर्कुलर जारी करने के लिए मजबूर होना पड़ा, जिसमें हर डी एम से हर शनिवार और बुधवार को अपने या अपने जिले में कम से दो दूरदराज के इलाकों का दौरा करने को कहा गया ।

कुछ कलेक्टरों की जब सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर आलोचना हुयी तो आलोचना करने वाले नागरिकों को ब्लॉक कर दिया गया । मेरे साथ–साथ दूसरों के साथ भी ऐसा हुआ है। एक चरम मामले में, जब गांदरबल के डीएम के रूप में तैनात 2014 बैच की भारतीय प्रशासनिक सेवा की अधिकारी को आलोचना से इतना अपमानित महसूस हुआ कि उन्होंने एक सामाजिक कार्यकर्ता को गिरफ्तार करवा कर और छह दिनों के लिए पुलिस हिरासत में भेज दिया । यह घटना जून 2021 के मध्य में हुई थी, जब 50 वर्षीय सज्जाद राशिद ने गांदरबल के मानसबल में एक सार्वजनिक कार्यक्रम के दौरान एलजी के सलाहकार बशीर खान को संबोधित किया और कहा– मुझे आपसे उम्मीदें हैं क्योंकि आप कश्मीरी हैं और हमारी समस्याओं को समझ सकते हैं । मैं आपके कॉलर को पकड़ सकता हूं और आपसे जवाब मांग सकता हूं लेकिन उन अधिकारियों से मुझे क्या उम्मीदें हो सकती हैं जो गैर–स्थानीय हैं ?

राशिद की इस टिप्पणी से डीएम नाराज़ हो गयीं जो बशीर खान के साथ उस कार्यक्रम में गयीं थीं। उस शाम, उस डी एन ने राशिद को गिरफ्तार करवाया और उसके खिलाफ भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) की धारा 153 के तहत मुकदमा दायर कर दिया जो धर्म, नस्ल, जन्म स्थान, निवास, भाषा के आधार पर विभिन्न समूहों के बीच शत्रुता को बढ़ावा देने और सद्भाव के रक्षा के खिलाफ काम करने के बारे में है।

भले ही राशिद को अगले दिन एक स्थानीय अदालत से जमानत मिल गई, लेकिन उसे अगले कुछ दिनों के लिए आईपीसी की धारा 151 के तहत हिरासत में रखा गया। अगर यह घटना किसी और राज्य में हुई होती तो डीएम का तबादला कहीं और हो जाता।

जब जम्मू–कश्मीर एक निर्वाचित सरकार वाला राज्य था, तब राजनेताओं और विधायकों ने जनता और नौकरशाही के बीच सेतु के रूप में काम किया । लेकिन अब यह पुल ढह गया है, जिससे अव्यवस्था, भ्रम और लगातार डर बना हुआ है। भ्रष्ट पुलिस अधिकारी और नौकरशाह गुंडागर्दी करते हैं और लोग

शिकायत दर्ज कराने की हिम्मत नहीं जुटाते। भ्रष्टाचार रोकने के लिए अधिकारियों को एक स्थान से दूसरी जगह स्थानांतरित करने की नीति बिना वजह काम करने लगती है। जबकि कुछ भ्रष्ट अधिकारी एक बार में छह या सात साल के लिए कुछ नगर संस्थानों या सरकारी कार्यालयों के साथ रहते हैं, अन्य अधिकारियों को किसी स्पष्ट कारण के लिए साल में दो से तीन बार स्थानांतरित कर दिया जाता है ।

धारा 370 और कश्मीर में स्थानीय निकायों के चुनावों का नाटक
होटलों में रहने के लिए चुने गए स्थानीय जन प्रतिनिधि

कागजों में जरूर जम्मू काश्मीर में कुछ स्थानीय निर्वाचित जन प्रतिनिधि हैं। उदाहरण के लिए, प्रत्येक जिले में 14 निर्वाचित जिला विकास परिषद (डीडीसी) सदस्य हैं जिनका काम अपने जिलों के दूरदराज के क्षेत्रों और जिला प्रशासन के लोगों के बीच सेतु के रूप में कार्य करना है । लेकिन इन सदस्यों को निर्वाचन के बाद जिला मुख्यालय के करीब ही होटलों में ठहरने के लिए बाध्य कर दिया जाता है और उनके विरोध के बावजूद बाहर निकलने की अनुमति नहीं है। कुछ जिला परिषदों के कुछ उपाध्यक्षों और अध्यक्षों का आरोप है कि उनके पास उचित कार्यालय और कर्मचारी भी नहीं हैं। सरकार कहती है कि इन जिला विकास परिषद सदस्यों की मुक्त आवाजाही पर लगी पाबंदियां उनकी ही सुरक्षा की वजह से हैं। लेकिन अगर ये लोग आतंकियों के निशाने पर हैं तो सरकार उन्हें पर्याप्त सुरक्षा क्यों नहीं मुहैया कराती?

जिला विकास परिषद सदस्यों के साथ हालात इतने खराब हैं कि भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के नेतृत्व वाली केंद्र सरकार के बेहद करीबी माने जाने वाली ''अपनी पार्टी'' के नेता अल्ताफ बुखारी ने भी धमकी दे दी है कि यदि मोदी सरकार स्थानीय निकायों को सशक्त बनाने का अपना वादा याद नहीं रखती, तो उनकी पार्टी से चुने गए जिला विकास परिषद सदस्य अपने पद से इस्तीफा दे देंगे।

इस बीच सरकारी कार्यालयों, थानों और नगर पालिकाओं में भ्रष्टाचार अभी भी जारी है । अनुच्छेद 370 के खत्म होने के बाद भी यद्यपि प्रशासन द्वारा जम्मू काश्मीर लोक सेवा गारंटी अधिनियम को बरकरार रखा गया था लेकिन सरकारी अधिकारियों द्वारा इसका कोई सम्मान नहीं किया जाता है । डिजिटल वित्तीय संस्था जम्मू–कश्मीर बैंक इस अधिनियम की धारा 8 के तहत प्राप्त छूट को लागू करके और जानबूझकर ऑनलाइन आरटीआई सुविधा को शामिल नहीं कर रही

है और इस तरह से अपने उपभोक्ताओं को सूचना का अधिकार अधिनियम (आरटीआई), 2005 के तहत जानकारी प्रदान नहीं करती है।

आम नागरिकों की शिकायतों का समाधान तभी किया जा सकता है, जब स्थानीय तहसीलदार, खंड विकास अधिकारी और पुलिस थाना अधिकारी उनके पास पहुंच और ग्रहणशील हों। लेकिन क्या नई दिल्ली को पता है कि जम्मू–कश्मीर में ऐसा बिल्कुल नहीं हो रहा है?

जम्मू–कश्मीर राज्य महिला आयोग, जम्मू–कश्मीर राज्य जवाबदेही आयोग, जम्मू–कश्मीर राज्य उपभोक्ता संरक्षण आयोग और जम्मू–कश्मीर राज्य मानवाधिकार आयोग जैसी संस्थाएं भी 2019 में बंद कर दी गई थीं। कोई नहीं जानता कि इन आयोगों में लंबित मामलों का क्या हुआ।

एल जी मनोज सिन्हा की जनता तक पहुंच

उपराज्यपाल मनोज सिन्हा लोगों तक बहुत हद तक पहुंचे है। उन्होंने जन शिकायतों के समाधान के लिए कई पहल की हैं। कुछ महीने पहले उन्होंने जम्मू–कश्मीर में प्रत्येक ग्राम पंचायत के लिए बैक टू विलेज कार्यक्रमके तहत स्थानीय विकास की जरूरतों के लिए 23 लाख रुपये की राशि स्वीकृत की थी उन्होंने एक स्वास्थ्य योजना शुरू की जिसके तहत केंद्र शासित प्रदेश के सभी निवासियों को आयुष्मान भारत प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना के तहत स्वास्थ्य बीमा दिया जाएगा और इस योजना के तहत पहले ही 22 लाख से अधिक गोल्डन कार्ड जारी किए जा चुके हैं, जिसमें 5 लाख रुपये तक का वार्षिक स्वास्थ्य बीमा कवर प्रदान किया गया है। इससे जम्मू–कश्मीर के कई निवासियों को मदद मिली है और लोग इसकी सराहना करते हैं ।

लेकिन जब शासन और राजनीतिक अस्थिरता के मुद्दों को हल करने की बात आती है तो जम्मू–कश्मीर को कठोर सुधारों की जरूरत होती है और एलजी अकेले ऐसा नहीं कर सकते। उन्हें जम्मू–कश्मीर में पारदर्शिता और निष्ठा के संस्थानों को चालू करने के बारे में गंभीरता दिखाने के लिए भारत सरकार की जरूरत होगी ।

निष्कर्ष

उम्मीद की एक किरण तब पैदा हुई जब प्रधानमंत्री मोदी ने जम्मू–कश्मीर के 14 प्रमुख राजनेताओं के साथ 24 जून को नई दिल्ली में बैठक बुलाई । यह मान

लिया गया कि मोदी सरकार जम्मू–कश्मीर में लोकतंत्र और लोकतांत्रिक संस्थाओं को बहाल करने को लेकर गंभीर है। लेकिन मोदी द्वारा केंद्र सरकार और जम्मू–कश्मीर के लोगों के बीच संबंधों से दिल्ली की डोरी (दिल से दूरी) दोनों को हटाने की बात कहने के कुछ ही दिनों बाद सिख नेता मनजिंदर सिंह सिरसा और भाजपा के कुछ नेताओं ने कश्मीर में सिखों के जबरन धर्मांतरण के लिए कश्मीरी मुसलमानों की आलोचना की । यह एक ऐसा मुद्दा बन गया जो कई दिनों तक न्यूज चौनलों, अखबारों और सोशल मीडिया पर छाया रहा। दो साल से जेएंडके पर सीधा शासन नई दिल्ली से चल रहा था तो देश की खुफिया एजेंसियों ने कभी सिखों के जबरन इस्लाम में धर्मांतरण की रिपोर्ट क्यों नहीं दी ? वे इसकी रिपोर्ट नहीं कर सके क्योंकि ऐसी कोई बात कभी नहीं हुई है ।

इस स्थिति को देखते हुए ऐसा लगता है कि नई दिल्ली में 24 जून को मोदी और जम्मू–कश्मीर के 14 नेताओं के बीच हुई मुलाकात का इस केंद्र शासित प्रदेश के लोगों और केंद्र के के बीच संबंधों से कोई लेना–देना नहीं था । यदि बैठक वास्तव में इस रिश्ते को ठीक करने के लिए बुलायी गयी होती तो वहां कुछ सकारात्मक परिणाम होता । यहां तक कि नेशनल कांफ्रेंस के नेता फारूक अब्दुल्ला ने हाल ही में कहा था कि बैठक के बाद से जमीन पर कोई अनुकूल परिणाम नहीं आए हैं ।

कोई सरकार तब तक सुशासन देने का दावा नहीं कर सकती, जब तक वह लोकतांत्रिक न हो। केवल लोकतांत्रिक तरीके से चुनी हुई सरकार को जवाबदेह, पारदर्शी, सहभागी और उत्तरदायी बनाया जा सकता है । शासन की एक प्रभावी प्रणाली बनाने के लिए सरकार को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि देश के सबसे कमजोर और वंचित समुदायों की आवाजें सुनी जाएं, खासकर निर्णय लेने की प्रक्रियाओं के दौरान । दुर्भाग्य से यह बिल्कुल नहीं हो रहा है ।

जम्मू–कश्मीर में एक महिला को न्याय के लिए नई दिल्ली में राष्ट्रीय महिला आयोग के हस्तक्षेप की मांग करनी पड़ती है क्योंकि जम्मू–कश्मीर राज्य महिला आयोग को बंद कर दिया गया था। कुछ महीने पहले जेएंडके राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के सीधे नियंत्रण में जेएंडके प्रदूषण नियंत्रण समिति में तब्दील कर दिया गया था। लेकिन हालांकि इस समिति में करीब 14 सदस्य हैं, लेकिन एक भी कश्मीर घाटी से नहीं है। क्यों? मैं इस विषय पर कई लेख लिख सकता हूं, दर्जनों उदाहरणों का हवाला देते हुए यह स्पष्ट कर सकता हूं कि जम्मू–कश्मीर की संस्थाओं को किस तरह से

अधिकार दिया गया है या निष्क्रिय कर दिया गया है। लेकिन क्या इससे जम्मू काश्मीर के लोगों को मदद मिलेगी मोदीजी ?

निर्धन, पिछड़े वर्गों और औरतों के लिए विनाशकारी है नया जनसंख्या कानून

—सुभाषिणी अली

यह तथ्य है कि योगी आदित्यनाथ सरकार हमेशा अपने मकसद को पाने के लिए बेहतर और बिना जोर–जबरदस्ती वाले तरीकों की बजाय धमकाने या डर दिखाने वाले उपायों को तरजीह देती है. इसका ताजा नमूना हाल में में लाया गया जनसंख्या नियंत्रण विधेयक है.

आदित्यनाथ को संघ परिवार और इसके समर्थकों के अलावा कई भाजपा मुख्यमंत्री भी एक नई राह दिखाने वाले नेता और कानून निर्माता के तौर पर स्वीकार करते हैं. अपनी इसी छवि को विस्तार देते हुए योगी आदित्यनाथ राज्य में जनसंख्या नियंत्रण के लिए एक दमनकारी विधेयक का मसौदा लेकर आए हैं. अगर दूसरे भी इसे अनुकरणीय मानकर स्वीकार कर लें, तो यह बेहद दुर्भाग्यपूर्ण होगा.

उत्तर प्रदेश विधि आयोग (लॉ कमीशन) द्वारा 7 जुलाई को सार्वजनिक किया गया विधेयक का मसौदा काफी खराब तरीके से लिखा गया और कई धमकियों और प्रलोभनों से भरा हुआ है, जो राज्य में जन्म दर को कम करने में तो शायद ही कोई मदद करेंगे, लेकिन निश्चित तौर पर गरीब परिवारों को काफी नुकसान पहुंचाएंगे.

यह विशेषकर सभी समुदायों और वर्गो की औरतों को सबसे ज्यादा नकारात्मक तौर पर प्रभावित करेंगे और उन्हें उनके अधिकारों से वंचित करके उनके स्वास्थ्य को जोखिम में डालने के साथ–साथ उनके सामाजिक अपमान और उनके खिलाफ हिंसा को बढ़ावा देंगे.

सरकार कानून के प्रारूप और इसके दस्तावेज के साथ एक जनसंख्या नीति 2021–30 भी लेकर आई है, जिसका लक्ष्य अगले एक दशक में राज्य की जन्म दर को घटाकर 2.8 से 2.1 पर लाना है.

गौरतलब है कि देश के कई राज्यों में यह लक्ष्य बगैर किसी जोर–जबरदस्ती किए ही हासिल कर लिया गया है, लेकिन दुर्भाग्यपूर्ण तरीके से उत्तर प्रदेश सरकार इनसे कोई सबक सीखने के लिए तैयार नहीं है. तथ्य यह है कि यह अब व्यापक तौर पर स्वीकार किया जाता है कि जनसंख्या नियंत्रण के लिए बल–प्रयोग करना न सिर्फ बुनियादी मानवाधिकार और स्त्रियों के अधिकारों का हनन है, बल्कि यह लक्ष्य को हासिल करने का बिल्कुल अप्रभावी और अक्षम तरीका है.

विधेयक के मसौदे में पांच अध्याय हैं, जिनमें हर में कई भाग हैं. मैं इसके कुछ सबसे महत्वपूर्ण और बेहद आपत्तिजनक बिंदुओं पर चर्चा करने की कोशिश करूंगी.

प्रोत्साहन और दंडात्मक कार्रवाई

अध्याय–2 प्रोत्साहनोंध्इनामों और दंडों की बात करता है. प्रोत्साहन मुख्य तौर पर सरकारी नौकरियों में नियोजित लोगों पर लागू होता है. अगर एक कर्मचारी (जिसे इस मसौदे में पुरुष माना गया है) या उसकी पत्नी, दो बच्चों के बाद नसबंदी करवाता है, तो वह पदोन्नति, वेतन वृद्धि और स्वास्थ्य सेवा, बच्चों के लिए शैक्षणिक सुविधाएं संबंधी दूसरे फायदों का हकदार होगा.

अगर वह या उसकी पत्नी, एक बच्चे के जन्म के बाद नसबंदी करवाता है, तो उसे और ज्यादा पुरस्कार देने का वादा किया गया.

आलोचकों ने इसके क्रियान्वयन के दौरान निश्चित तौर पर सामने आनेवाले भ्रष्टाचार और दिक्कतों की ओर ध्यान दिलाया है. इसके अलावा यह प्रक्रिया अविश्वसनीय स्तर की लालफीताशाही और कागजी कार्रवाई को भी न्योता देगी. अन्य मुद्दे भी हैं, जिनकी ओर ध्यान दिए जाने की जरूरत है.

जिस स्तर के पितृसत्तात्मक समाज में हम रहते हैं, उसमें नसबंदी का सारा बोझ महिलाओं को उठाना पड़ता है. इसका मतलब यह है कि पुरस्कारों को पाने की कोशिशें न सिर्फ कई महिलाओं की सेहत को नकारात्मक तरीके से प्रभावित करेंगी, बल्कि यह दूसरी समस्याओं को भी जन्म दे सकती हैं.

मिसाल के लिए, अगर किसी महिला पर एक बच्चे के जन्म के बाद नसबंदी कराने के लिए दबाव बनाया जाता है, और अगर वह लड़की को जन्म देती है या किसी दुर्भाग्यपूर्ण घटना में यह बच्चा जीवित नहीं रहता है, तो उस महिला को तलाक दे दिए जाने और यहां तक कि कुछ मामलों में उसकी जान ले लिए जाने की भी संभावना है.

जहां, पुरुष के पास दूसरा विवाह करने का विकल्प है, वहीं नसबंदी हो जाने के तथ्य के कारण महिला का भविष्य– अगर वह जीवित रह जाती है– काफी अनिश्चित हो जाएगा. यह कोई अतिशयोक्तिपूर्ण कल्पना नहीं है. लड़की को जन्म देने के कारण महिलाओं के साथ होने वाली घरेलू हिंसा, तलाक और यहां तक कि उसकी जान जाने के मामलों की संख्या काफी ज्यादा है.

पुरस्कार वाले भाग में, गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले परिवार, एक बच्चे के जन्म के बाद पति या पत्नी में से किसी एक की नसबंदी कराए जाने पर आर्थिक भुगतान के हकदार होंगे. यह रकम लड़की के जन्म के बाद नसबंदी कराने पर एक लाख और लड़के के जन्म के बाद नसबंदी कराने पर 80 हजार रुपये होगी. इस बात की काफी संभावना है कि ज्यादातर मामलों में नसबंदी महिलाओं को करानी होगी. इस तरह से ये महिलाएं होंगी, जिनके स्वास्थ्य और सुरक्षा पर सबसे ज्यादा खतरा होगा.

प्रस्तावित दंड काफी कठोर हैं. दो से ज्यादा बच्चे वाले सरकारी अधिकारियों को पदोन्नति और वेतन वृद्धि से हाथ धोना पड़ेगा. दो बच्चों की नीति का उल्लंघन करने वाले सभी लोगों को सरकार द्वारा प्रायोजित कल्याणकारी योजनाओं से वंचित करके और सब्सिडी वाले राशन को परिवार के सिर्फ चार लोगों के लिए सीमित करके दंडित किया जाएगा.

इसके अलावा इस नियम का उल्लंघन करनेवालों को स्थानीय निकाय के चुनाव लड़ने से अयोग्य करार दिया जाएगा. इसके अलावा अन्य दंडों (जो सूची में शामिल नहीं हैं या जिनका वर्णन नहीं किया गया है) का भी प्रावधान किया जा सकता है.

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे (एनएफएचएस) जैसे कई सर्वेक्षणों द्वारा यह स्थापित किया जा चुका है कि सामाजिक और आर्थिक तौर पर सबसे निचले पायदानों पर खड़े वर्गों के यहां दो से ज्यादा बच्चे होते हैं. इन वर्गों में मुख्यतौर पर दलित, आदिवासी, पिछड़ी जातियों और अल्पसंख्यक समुदायों के सबसे निर्धन तबके होते हैं, जिनकी पहुंच शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं और सांस्थानिक प्रसव तक नहीं है जो उच्च मातृ मृत्यु दर और शिशु मृत्यु दर का कारण बनता है.

ये वे कारक हैं, जिसके लिए निश्चित तौर पर वे जिम्मेदार नहीं हैं और यह उनके कई बच्चे होने की वजह बनते हैं. उन्हें सरकार की कमी और गलतियों के लिए जिम्मेदार ठहराना, उन्हें उनकी गरीबी और किसी और के पापों के लिए सजा देने के समान है. दंड के तौर पर उन्हें उन लोककल्याणकारी उपायों से वंचित करना, जो खासकर उन्हें गरीबी से उबारने के लिए बनाए हैं, उन्हें और ज्यादा गरीब, ज्यादा कुपोषित और ज्यादा भूखा रहने पर मजबूर कर देगा, जो उन्हें और ज्यादा बच्चे पैदा करने की ओर लेकर जाएगा.

स्थानीय चुनावों का मकसद गरीबों और वंचितों तक लोकतंत्र और विकास का फल पहुंचाना था. इसके अर्थवान होने के लिए उन्हें इन चुनावों में बतौर उम्मीदवार हिस्सेदारी करने के लिए हर तरह से प्रोत्साहित किया जाना चाहिए. पहले ही इन चुनावों में धनबल के बढ़ते बोलबाले के कारण गरीब उम्मीदवारों के लिए जगह नहीं बची है. अगर यह कानून बना दिया जाता है तो उम्मीवार बनने के योग्य गरीब लोगों की संख्या नाटकीय तरीके से कम हो जाएगी और लोकतंत्र और ज्यादा सिकुड़ जाएगा.

जिन राज्यों में ऐसे कानून बनाए गये हैं वहां महिलाओं को तलाक देने या छोड़ देने और इस अयोग्यता को मात देने के लिए पुरुषों द्वारा द्विविवाही संबंध बनाने की घटनाएं देखी गई हैं और खराब और जोर–जबरदस्ती करने वाले कानूनों का खामियाजा महिलाओं को भुगतना पड़ा है.

दूसरे दंड के तौर पर दो से ज्यादा बच्चे वाले लोगों को सरकारी नौकरियों के लिए अयोग्य कर दिया गया है. यह अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के समुदायों को सबसे ज्यादा नुकसान पहुंचाएगा, जो सरकारी नौकरियों में आरक्षण के अपने अधिकार का इस्तेमाल करने से महरूम कर दिए जाएंगे. हकीकत यह है कि इस अधिकार को पहले से ही कतरा जा रहा है. इस ड्राफ्ट बिल का कानून बनना देश के सबसे ज्यादा दलित और जरूरतमंद नागरिकों के बेहर भविष्य के सपनों पर क्रूर प्रहार होगा.

इस भाग का अंतिम दंड यह है कि दो बच्चों के नियम का उल्लंघन करने वाले सभी सरकारी सब्सिडियों से वंचित हो जाएंगे.

यह बात सोच से परे है कि एक ऐसी स्थिति में जब कोरोना महामारी ने एक बड़े तबके को भीषण गरीबी में धकेल दिया है, करोड़ों परिवार सरकार द्वारा लंबे अंतरालों पर उनके बैंक खातों में डाले जानेवाली बेहद मामूली रकमों से भी वंचित हो जाएंगे. जिनके पास घर नहीं हैं, वे बेघर ही बने रहेंगे.
दंडों की फेहरिस्त यहीं खत्म नहीं होती है. इसमें एक बिंदु के तहत यह भी कहा गया है कि सरकार इसमें और दंडों को जोड़ सकती है. क्या किसी सरकार को अपनी मनमर्जी से बगैर किसी की इजाजत लिए क्रूर सजाएं निर्धारित करने की छूट दी जा सकती है? यह प्रावधान नागरिकों के अधिकारों की हर समझ के विपरीत है.

घातक हो सकते हैं नतीजे

ऐसा लगता है कि यह ड्राफ्ट बिल हमारे हद दर्जे के पितृसत्तात्मक समाज में बेटे की पसंद के कारण होने वाली तबाही से पूरी तरह से आंखें मूंदकर तैयार किया गया है.

सबसे हालिया आंकड़ों के मुताबिक उत्तर प्रदेश का लिंगानुपात 1000 (पुरुष) रू 789 (स्त्री) है. इस हालात को सुधारने के लिए जो कानून, पूर्व गर्भाधान और प्रसव पूर्व निदान तकनीक अधिनियम (पीसीपीएनडीटी कानून) बनाया गया था, वह कागजों में पड़ा धूल खा रहा है. ऐसी स्थिति में अगर यह ड्राफ्ट बिल कानून की शक्ल ले लेता है, तो इसमें कोई संदेह नहीं है कि स्त्री भ्रूण हत्या कई गुना बढ़ जाएगी और इसका राज्य में स्त्रियों की हैसियत और सामाजिक संबंधों पर विध्वंसकारी प्रभाव पड़ेगा.

कानून का यह मसौदा, अध्याय 5 रू सरकार के कर्तव्य के साथ खत्म होता है. इसमें जिस दूसरे कर्तव्य का उल्लेख किया गया है, वह है सभी सरकारी स्वास्थ्य केंद्रों में मातृत्व केद्रों का निर्माण.

यह तथ्य कि इस कर्तव्य को पूरा करने की बारी बाद की किसी तारीख में आएगी, अपने आप में इस बात का सबूत है कि सभी सरकारी स्वास्थ्य केंद्रों में ऐसे मातृत्व केंद्र आज अस्तित्व में नहीं हैं. इसका अर्थ यह है कि अगर सभी स्त्रियों पुरस्कारों का फायदा उठाना और दंडों से बचना चाहेंगी, तो भी उनके

लिए ऐसा करना संभव नहीं होगा, क्योंकि तथ्य यह है कि सरकार ने इसके लिए जरूरी स्वास्थ्य केंद्र उपलब्ध ही नहीं कराए हैं.

यह बस एक संकेत है कि आखिर इस कानून के मसौदे के साथ क्या गड़बड़ी है और इसे वापस लेना क्यों जरूरी है?

बेहतर उदाहरण और बिना जबरदस्ती के तरीके

राज्य सरकार, यह कानून बनाकर एक दशक में 2.1 की जो जन्म दर हासिल करना चाहती है, उसे पहले ही दूसरे राज्यों में बगैर कोई जोर–जबरदस्ती करने वाला कानून बनाए ही हासिल किया जा चुका है.

अगर हम केरल का उदाहरण लेते हैं, जहां जन्म दर या प्रजनन दर 1.7 (जो एक दशक के बाद उत्तर प्रदेश द्वारा निर्धारित लक्ष्य से भी कम है) तो हमें यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि वहां स्त्री साक्षरता दर 91 फीसदी है जबकि उत्तर प्रदेश में यह दर सिर्फ 61 फीसदी है, जहां सिर्फ अपना नाम लिख लेने को ही साक्षर होने के बराबर माना जाता हैय केरल में सांस्थानिक प्रसव 99 फीसदी है, जबकि यूपी में यह 67 फीसदी है और केरल में शिशु मृत्यु दर 10, 000 जन्म पर 7 मृत्यु है, जबकि उत्तर प्रदेश में यह भयावह तरीके से 47 है. इन उच्च संकेतकों के कारण ही केरल में जन्म दर में कमी आई है.

केरल और तमिलनाडु जैसे दूसरे राज्यों ने स्वाथ्य इंफ्रास्ट्रक्चर, शिक्षा, प्रसव पूर्व और प्रसव पश्चात देखभाल और अन्य कल्याणकारी उपायों पर लगातार निवेश किया है. अगर यूपी को भी खुद के लिए तय किया गया लक्ष्य हासिल करना है, तो उसे भी ऐसा ही करना होगा.

लेकिन दुर्भाग्यूपर्ण है कि उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री खुद को एक एक सख्त कदम उठाने के इच्छुक मजबूत व्यक्ति के तौर पर पेश करना पसंद करते हैं. वे पुलिस को 'ठोकने' की पूरी आजादी लेकर कानून एवं व्यवस्था को सुधारने का दावा करते हैं, लेकिन उत्तर प्रदेश में अपराध दर कम होने की जगह बढ़ ही गई है. गरीब परिवारों पर दंडात्मक कार्रवाई करके और गरीब औरतों के साथ ज्यादा क्रूरता भरा सलूक करके राज्य में जन्म दर कम करने की उनकी कोशिशों का परिणाम भी उलटा ही निकलेगा.

यह जरूरी है कि जनसंख्या नियंत्रण के इस कानून के मसौदे हर मुमकिन तरीके से विरोध किया जाए. इस कानून का लागू होना राज्य की एक बड़ी आबादी के

लिए विनाशकारी होगा, जो पहले ही न्यूनतम मानवीय स्थितियों से कम पर गुजर–बसर करने के लिए संघर्ष कर रही है.

यह सबसे खौफनाक हिंसा, भेदभाव और वंचना से जूझ रही राज्य की औरतों की स्थिति को और बदतर बनाने का काम करेगा.

(उत्तर प्रदेश विधि आयोग ने कानून के मसौदे को लेकर 19 जुलाई तक सुझाव और संशोधन मांगे थे. ऑल इंडिया डेमोक्रेटिक वुमेंस एसोसिएशन ने उपरोक्त बिंदुओं में से अधिकांश को शामिल करते हुए एक ज्ञापन आयोग को सौंपा है.)

(सुभाषिनी अली पूर्व सांसद और माकपा की पोलित ब्यूरो सदस्य हैं.)

लैंगिक पूर्वाग्रहों के रुझानों के न्यायायिक आदेशों पर अखिल भारतीय जनवादी महिला समिति के हस्तक्षेप

संदर्भ : गोहाटी उच्च न्यायालय एवं बंबई सत्र न्यायालय के हाल के फैसले

– सुनीता पांडे

अखिल भारतीय जनवादी महिला समिति गुवाहाटी उच्च न्यायालय के एक पृतिगामी निर्णय को चिंता के साथ देखता है। इस फैसले मे आरोप लगाया गया है कि आई आई टी गुवाहाटी के एक सीनियर छात्र ने किसी काम के बहाने पीड़िताधरिपोर्टर को प्रलोभन देकर जबरन शराब पिलाकर उसके साथ बलात्कार किया ।पीड़िता को अगले दिन सुबह पाँच बजे गुवाहाटी मेडिकल कॉलेज मे होश आया ।

अदालत ने माना कि आरोपी के खिलाफ प्रथम द्रष्ट्या स्पष्ट मामला है,लेकिन चूँकि जाँच पूरी हो चुकी है और आरोपी एक प्रतिभाशाली छात्र और राज्य के भविश्य की सम्पत्ति है,इसलिये उसकी निरंतर हिरासत आवश्यक नही हो सकती है । अदालत ने आरोपी को रूपया 30000 की जमानत पर यह साबित करने के बाद रिहा कर दिया कि आरोपी द्वारा सबूतों के साथ छेड़छाड़ या गवाहों को प्रभावित करने की कोई सम्भावना नही है ।

शामिल शामिल आपराधिक आचरण के अलावा मामले के तथ्य अत्यंत महिला विरोधी,पितृ सत्तात्मक और प्रतिगामी रवैये को उजागर करते हैं ,जिन्होने अपनी

व्यक्तिगत स्वायत्तता और शारीरिक अखंडता की परवाह किये बिना भयावह योजना और तय्यारि के साथ जबरन योजना तय्यार की।

कोई जमानत इसलिये नही दी जानी चाहिए क्योंकि एक व्यक्ति एक प्रतिश्थित संस्थान से सम्बंधित है,और उसकी क्षेत्र मे भविष्य की संपति होने की संभावना है । जबकि पीड़िता के वकील ने न्यायालय मे विभिन्न फैसलों का हवाला दिया था कि जमानत देने में जघन्यता एक कारक होना चाहिये ।जमानत देने के आदेश से यह स्पष्ट नही है आरोपी गवाहों को प्रभावित करने या सबूतों से छेडछाड़ क्यों नही कर पायेगा ।जमानत आदेश परिसर मे आरोपी की लगातार उपस्थिति के पीड़िता पर पड़ने वाले भावनात्मक और शारीरिक प्रभाव और इस तथ्य पर विचार करने मे विफल रहा है कि आरोपी पीड़िता पर दबाव नही बना सकता ।

इस आदेश मे यह भी चौकाने वाली बात है कि असहमति के आरोपी कार्यकर्ताओं और पत्रकारों के मामलों मे जहाँ सालों तक बिना जमानत के जेल मे रक्खा जाता है वहीँ जघन्य अपराध करने वाले व्यक्ति को उस मामले मे इतनी आसानी से छोड़ दिया जाता है जहां न्यूनतम सजा 10 साल की कैद है ।जमानत देने का यह आदेश बलात्कार के मामलों मे देखी गई दंड से मुक्ति को और बड़ाता है।इस जघन्य घटना और जमानत मिलने से विश्व विध्यालय की अन्य महिला छात्राओं पर भी प्रभाव पड़ेगा,जो अपनी शिक्षा और आकांक्षाओं को आगे बडाने के लिये पहले से ही विभिन्न लेंगिग पूर्वाग्रहों को दूर4कर चुकी हैं ।

अखिल भारतीय जनवादी महिला समिति का मानना है कि यौन उत्पीडन और हिंसा से सम्बंधित मामलों मे जमानत देने से पहले अदालतों को अपराध की जघन्यता और यह आरोपी के विकृत रवैये को क्या दर्शाता है,इस पर विचार करना चाहिये ।

अखिल भारतीय जनवादी महिला समिति (एडवा) ने ग्रेटर बॉम्बे के सत्र न्यायालय के हालिया आदेश की कड़ी निंदा की है जिसमे कि एक बार फिर वैवाहिक बलात्कार को हिंसा और क्रूरता के रूप में मान्यता देने से इनकार कर दिया।

इस मामले में, शिकायतकर्ता ने अपने पति पर वैवाहिक बलात्कार का आरोप लगाया था जिसके कारण वह पीड़ित थी। शिकायतकर्ता जो शरीर के निचले हिस्से से पक्षाघात से ग्रसित थी द्वारा धारा 498, 323, 504, 506(2) और धारा 34 आई पी सी के तहत की गई शिकायत मे उसके पति द्वारा उसके विपरीत की गई घोर शारीरिक हिंसा स्पष्ट रूप से दर्ज होने के बावजूद अदालत ने

उसे प्रथम द्रष्ट्या धारा 498 ए के तहत क्रूरता का दोषी कैसे नहीं ठहराया,यह बात समझ से बाहर है ।

जबकि आईपीसी की उक्त धाराएँ घोर शारीरिक और मानसिक हिंसा समेत गंभीर चोट आदि को दंडित करती है। सत्र न्यायालय ने, पति द्वारा जबरन यौन संबंध बनाने के पत्नी के दावे को खारिज करते हुए, उसके पत्नी होने के कारण, केवल उसके द्वारा झेली गई अत्यधिक शारीरिक चोटों पर एक दयनीय टिप्पणी जोड़ते हुए पति और उसके परिवार के सदस्यों को अग्रिम जमानत देते हुए कहा, "यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है कि युवती लकवा से पीड़ित थी। किन्तु आवेदकों को इसके लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है।[ष]
सत्र न्यायालय का आदेश न केवल लंबे और कठिन संघर्ष के लिए एक झटका है,बल्कि वैवाहिक बलात्कार की न्यायायिक मान्यता लेंगिग असंवेदनशीलता और पितृसत्तात्मकता का एक भी सबूत है

न्यायपालिका के भीतर प्रचलित दृष्टिकोण जिनके तत्काल निवारण की आवश्यकता है।इस मुद्दे पर सर्वोच्च न्यायालय, उच्च न्यायालयों और अभी भी हाल ही मे केरल उच्च न्यायालय द्वारा वैवाहिक बलात्कार को क्रूरता के रूप में मान्यता दी और तलाक के लिए एक आधार माना है,जबकि निचली अदालतों द्वारा वैवाहिक बलात्कार की मान्यता देने मे उपेक्षा की जा रही है। न्यायपालिका के लिए जरूरी है कि सभ्य समाजों में वैवाहिक बलात्कार का कोई स्थान नहीं है, जो कि पुरुषों और महिलाओं को समान भागीदार के रूप में मानते हैं और यह मानते हैं कि महिलाओं की शारीरिक अखंडता और स्वायत्तता है वह पूर्ण रूप से विवाह के भीतर और बाहर संभोग को ना कहने का अधिकार रखती है ,इन विषयों पर न्यायपालिका के प्रशिक्षण और संवेदीकरण की विशेष आवश्यकता है। घरेलू हिंसा के खिलाफ महिलाओं की सुरक्षा अधिनियम 2005 जैसे कानूनों के बावजूद जो विशेष रूप से वैवाहिक बलात्कार को अंतरंग साथी के हिंसा के रूप को जघन्य कृत्य और दंडात्मक मान्यता देती है की लगातार अनदेखी की जा रही है। एडवा ने बार–बार वैवाहिक बलात्कार को वैधानिक मान्यता और इसे भारतीय दंड संहिता के तहत एक अपराध के रूप में मान्यता देने की मांग की है और एक बार फिर यह निर्णय उसी की आवश्यकता पर प्रकाश डालता है।

इसलिए एडवा अपनी मांग दोहराती है कि वैवाहिक बलात्कार को विशेष रूप से दंड कानून के तहत अपराध के रूप में मान्यता दी जानी चाहिए,साथ ही ग्रेटर बॉम्बे के निचली अदालत के इस फैसले के खिलाफ अपील किये जाने और इसे पलटे जाने की मांग करती है।